स्वामी सत्यमित्रानंद गिरि ः जिन्होंने सामाजिक चेतना को धर्म से जोड़ा

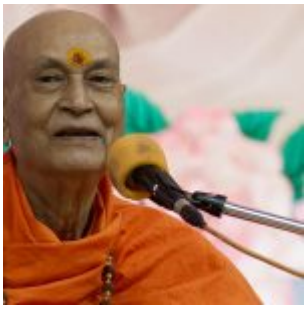

विश्व प्रसिद्ध भारत माता मंदिर के संस्थापक, भारतीय अध्यात्म क्षितिज के उज्ज्वल नक्षत्र, निवृत्त शंकराचार्य, पद्मभूषण स्वामी सत्यमित्रानंद गिरि मंगलवार सुबह हरिद्वार में उनके निवास स्थान राघव कुटीर में ब्रह्मलीन हो गए। वे पिछले 15 दिनों से गंभीर रूप से बीमार थे, उनके देवलोकगमन से भारत के आध्यात्मिक जगत में गहरी रिक्तता बनी है एवं संत-समुदाय के साथ-साथ असंख्य श्रद्धालुजन शोक मग्न हो गये हैं।

स्वामी सत्यमित्रानंद गिरी की भारत के संतों, महामनीषियों में महत्वपूर्ण भूमिका रही हंै। गुणवत्ता एवं जीवन मूल्यों को लोक जीवन में संचारित करने की दृष्टि से उनका विशिष्ट योगदान रहा हैं। गिरते सांस्कृतिक मूल्यों की पुनर्प्रतिष्ठा उनके जीवन का संकल्प था। वे अध्यात्म की सुदृढ़ परंपरा के संवाहक तो थे ही महान् विचारक एवं राष्ट्रनायक भी थे। उनकी साधना एवं संतता का उद्देश्य आत्माभिव्यक्ति, प्रशंसा या किसी को प्रभावित करना नहीं, अपितु स्वांतसुखाय एवं स्व परकल्याण की भावना रही है। इसी कारण उनके विचार और कार्यक्रम सीमा को लांघकर असीम की ओर गति करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। उन्हें हम धर्मक्रांति एवं समाजक्रांति के सूत्रधार कह सकते हैं। वे समाज सुधारक तो थे ही व्यक्ति-व्यक्ति के उन्नायक भी थे।

एक महान संतपुरुष महामण्डलेश्वर स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरिजी महाराज स्वयं में एक संस्था थे, हरिद्वार में भारतमाता मंदिर के संस्थापक थे, व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के नैतिक और आत्मिक उत्थान के लक्ष्य को लेकर वे सक्रिय थे। उन्होंने अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को जिस चैतन्य एवं प्रकाश के साथ जीया है वह भारतीय ऋषि परम्परा के इतिहास का महत्वपूर्ण अध्याय है। उन्होंने स्वयं ही प्रेरक जीवन नहीं जीया बल्कि लोकजीवन को ऊंचा उठाने का जो हिमालयी प्रयत्न किया है वह भी अद्भुत एवं आश्चर्यकारी है। अपनी कलात्मक अंगुलियों से उन्होंने नये इतिहासों का सृजन किया है कि जिससे भारत की संत परम्परा गौरवान्वित हुई है। उन्होंने स्वामी विवेकानन्द की अनुकृति के रूप में प्रसिद्धि एवं प्रतिष्ठा पाई।

स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरिजी महाराज का जन्म 19 सितंबर, 1932 को आगरा में हुआ। उनके पिता शिव शंकर पांडे और उनकी मां त्रिवेणी देवी दोनों भक्त ब्राह्मण परिवारों से आए और उन्होंने उन्हें अंबिका प्रसाद का नाम दिया। उनके पिता एक शिक्षक थे। जिन्हें राष्ट्रपति सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने

सम्मानित किया। उनके पिता ने उन्हें सदैव अपने लक्ष्य के प्रति सजग और सक्रिय बने रहने की प्रेरणा दी। महामंडलेश्वर स्वामी वेदव्यासानंदजी महाराज से उन्हें सत्यमित्र ब्रह्मचारी नाम मिला और साधना के विविध सोपान भी प्राप्त हुए। उन्होंने हिंदी और संस्कृत का अध्ययन किया और आगरा विश्वविद्यालय से एमए की डिग्री प्राप्त की। उन्होंने हिंदी साहित्य और साहित्य में 'साहित्य रत्न' की डिग्री एवं वाराणसी विद्यापीठ से शास्त्रीय डिग्री प्राप्त की। 29 अप्रैल, 1960 अक्षय तृतीया के दिन स्वामी करपात्रीजी के निर्देशन में ब्रह्मचारी सत्यमित्र को ज्योतिर्मठ भानपुरा पीठ के शंकराचार्य स्वामी सदानंद गिरिजी महाराज ने संन्यास आश्रम में दीक्षित कर जगद्गुरु शंकराचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया और यहीं से शुरू हुई स्वामी सत्यमित्रानंदजी की देश के ग्राम-ग्राम में दीन दुखियों, गिरि-आदिवासी-वनवासी की पीड़ा से साक्षात्कार की यात्रा। प्रख्यात चिकित्सक स्व. डॉ. आर एम सोजतिया से निकटता के चलते भानपुरा क्षेत्र में उन्होंने अति निर्धन लोगों के उत्थान की दिशा में अनेक कार्य किए। उन्होंने 1969 में स्वयं को हिन्दू धर्म के सर्वोच्च पद शंकराचार्य से मुक्त कर गंगा में दंड का विसर्जन कर दिया और तब से वे केवल परिव्राजक संन्यासी के रूप में देश-विदेश में भारतीय संस्कृति व अध्यात्म के प्रचार-प्रसार में संलग्न रहे। पद विसर्जन की यह घटना अनसोचा, अनदेखा, अनपढ़ा कालजयी आलेख बना। पदलिप्सा की अंधी दौड़ में धर्मगुरु भी पीछे नहीं हैं। इसमें उनकी साधना, संयम, त्याग, तपस्या और व्रत सभी कुछ पीछे छूट जाते हैं। ऐसे समय में स्वामीजी द्वारा किया गया पद विसर्जन राजनीति और धर्मनीति की जीवनशैली को नया अंदाज दे गया।

समन्वय-पथ-प्रदर्शक, अध्यात्म-चेतना के प्रतीक, भारतमाता मन्दिर से प्रतिष्ठापक स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरिजी 27 वर्ष की अल्प आयु में ही शंकराचार्य-पद पर अभिषिक्त होने का गौरव प्राप्त हुआ। वे लगातार दीन-दुखी, गिरिवासी, वनवासी, आदिवासी, हरिजनों की सेवा और साम्प्रदायिक मतभेदों को दूर कर समन्वय-भावना का विश्व में प्रसार करने के लिए प्रयासरत हैं। उनकी उल्लेखनीय सेवाओं के लिए भारत सरकार ने वर्ष 2015 में उन्हें पदम् भूषण से सम्मानित किया। गतदिनों विज्ञान भवन में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक श्री मोहन भागवत के विशेष व्याख्यान सहित अनेक अवसरों पर मुझे उन्हें सुनने का अवसर मिला।

स्वामीजी के जीवन की यों तो अनेक उपलब्धियां हैं लेकिन उन्होंने धार्मिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय-चेतना के समन्वित दर्शन एवं भारत की विभिन्नता में भी एकता की प्रतीति के लिए पतित-पावनी-भगवती-भागीरथी गंगा के तट पर बहुमंजिलें भारतमाता-मन्दिर का निर्माण करवाया है जो आपके मातृभूमि प्रेम व उत्सर्ग का अद्वितीय उदाहरण है। इस मंदिर का उद्घाटन तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने 15 मई 1983 को किया। इस मंदिर की प्रत्येक मंजिल भारतीय संस्कृति को गौरवान्वित करती है। इस मंदिर में रामायण के दिनां से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक के इतिहास को प्रभावी एवं आकर्षक तरीके से दर्शाया गया है। पहली मंजिल पर भारतमाता की मंदिर है। दूसरी मंजिल भारत के प्रसिद्ध नायकों को समर्पित है। तीसरी मंजिल भारत की श्रेष्ठ महिलाओं जैसे- मीराबाई, सावित्री, मैत्रयी आदि को समर्पित है। भारत के विभिन्न धर्मों जैसे- बौद्ध धर्म, जैन धर्म, सिक्ख धर्म सम्मेत विभिन्न धर्मों के महान संतों को चित्रित किया गया है। पांचवां मंजिल सभी धर्मों के प्रतीकात्मक चिन्हों को दर्शाता है, जो राष्ट्रीय एकता एवं सर्वधर्म समन्वय की झांकी प्रस्तुत करता है। छठी मंजिल पर शक्ति की देवी के विविध रूप देखे जा सकते हैं जबकि सातवीं मंजिल भगवान विष्णु के सभी

अवतारों के लिए समर्पित हैं। आठवीं मंजिल पर भगवान शिव के मंदिर हैं जहां से दर्शक एवं भक्त हिमालय, हरिद्वार, सप्त सरोवर के शानदार दृश्यों का आनंद ले सकता है। इस मन्दिर में देश-विदेश के लाखों लोग दर्शन कर अध्यात्म, संस्कृति, राष्ट्र और शिक्षा सम्बन्धी विचारों की चेतना और प्रेरणा प्राप्त कर रहे हैं। हरिद्वार के अतिरिक्त रेणुकूट, जबलपुर, जोधपुर, इन्दौर एवं अहमदाबाद में आपके आश्रम एवं नियमित गतिविधियां संचालित हैं।

स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरिजी ने 1988 में समन्वय सेवा फाउंडेशन की स्थापना की जिसका उद्देश्य गरीब लोगों, पहाड़ी इलाकों में शिक्षा एवं सेवा के उपक्रम संचालित करना है। उन्होंने समन्वय परिवार, समन्वय कुटीर, कई आश्रम और कई अन्य सामाजिक, आध्यात्मिक और धार्मिक कार्यक्रम भी स्थापित किए हैं। वे पिछले पांच दशकों के दौरान कई देशों की यात्रा कर चुके हैं और कई देशों में बहुत से अनुयायी हैं। उन्होंने अफ्रीका के कई देशों, इंग्लैंड, जर्मनी, स्विट्जरलैंड, नीदरलैंड, अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, जापान, इंडोनेशिया, मलेशिया, हांगकांग, थाईलैंड, सिंगापुर, फिजी में कई देशों में शिक्षा और पूजा केंद्र स्थापित किए हैं। इस तरह से उन्होंने समन्वय भाव के प्रसार के लिए विश्व के 65 देशों की यात्रा अनेक बार कर चुके हैं।

स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरिजी धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक महापुरुष हैं। उन्होंने समन्वय के माध्यम से सांस्कृतिक चेतना को जागृत कर मानव के नवनिर्माण का बीड़ा उठाया। वे हिन्दू समाज के पतन से चिंतित थे और इसके लिए वे व्यापक प्रयत्न करते रहे। भारत की संस्कृति को जीवंत करने के लिए उनके प्रयास उल्लेखनीय रहे हैं। वे समन्वय के माध्यम से जाति, वर्ण, भाषा, वर्ग, प्रांत एवं धर्मगत संकीर्णताओं से ऊपर उठकर मानव जाति को जीवन मूल्यांे के प्रति आकृष्ट करने के लिए अनेक उपक्रम संचालित करते रहे। उन्होंने धार्मिकता के साथ नैतिकता और राष्ट्रीयता की नई सोच देकर एक नया दर्शन प्रस्तुत किया। पहले धार्मिकता के साथ केवल परलोक का भय जुड़ा था। उन्होंने उसे तोड़कर इहलोक को सुधारने की बात कही है। भारत के गिरते नैतिक एवं चारित्रिक मूल्यों को देखकर उन्होंने एक आवाज उठाई कि जिस देश के लोग धार्मिकता एवं राष्ट्रीयता का दंभ नहीं भरते वहां अनैतिक स्थितियों होती हैं।

स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरिजी सत्यं शिवं सुंदरम् के प्रतीक थे। यही कारण है कि उनके विचारों में केवल सत्य का उद्घाटन या सौंदर्य की सृष्टि ही नहीं हुई है अपितु शिवत्व का अवतरण भी उनमंे सहजतः हो गया है। उनके विचारों की सार्वभौमिकता का सबसे बड़ा कारण है कि वे गहरे विचारक होते हुए भी किसी विचार से बंधे हुए नहीं थे। उनका आग्रहमुक्त/निद्र्वंद्व मानस कहीं से भी अच्छाई और प्रेरणा ग्रहण कर लेता था। उनकी प्रत्युत्पन्न मेधा हर सामान्य प्रसंग को भी पैनी दृष्टि से पकड़ने में सक्षम थी। उनके आसपास क्रांति के स्फुलिंग उछलते रहते थे। नया करना उनकी इसी क्रांतिकारिता का प्रतीक है। उनके विचार इतने वेधक होते थे कि अनायास ही अंतर में झांकने को विवश कर देते हैं।

स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरिजी निरन्तर एक सक्षम नेतृत्व की आवश्यकता महसूस करते थे। दुशासन नेतृत्व को कैसे बदला जाए इसके उत्तर में वे कहते थे कि आवश्यकता है कि फिर से रामप्रसाद बिस्मिल, अश्फाक उल्ला खां, चंद्रशेखर आजाद, पू. श्री गुरुजी डॉ. हेडगेवार उत्पन्न हों और ऐसे निश्छल, निष्कलंक एवं क्रांतिकारी व्यक्तित्व लोक-नेतृत्व की पहली पंक्ति में खड़े हांे।

स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरिजी विलक्षण प्रतिभा के धनी थे, महान साधक थे। लोककल्याण के लिए उनकी जीवनयात्रा चलयमान रही है। मानवीय मूल्यों के प्रति समर्पित इस महान संतपुरुष का ध्यान पिछड़े वर्ग के उत्थान, वर्ण, जाति तथा सम्प्रदायों के बीच सौहार्द और पशु-पर्यावरण संरक्षण की आदि की ओर तो गया ही है साथ ही साथ एक व्यापक पटल के द्वार उनके समक्ष खुल गए। भारतीय मनीषा ने वसुधैव कुटुम्बकम और सर्वे भवन्तु सुखिना: के मंत्रों का उद्घोष किया था स्वामीजी उसी दिशा में अग्रसर रहे।

स्वामीजी नौ दशक में विकास की अनगिनत उपलब्धियों को सृजित करते हुए देह से विदेह हो गये। लेकिन उनकी शिक्षाएं, कार्यक्रम, योजनाएं, विचार आज न केवल हिन्दू समाज बल्कि राष्ट्रीयता के उज्ज्वल इतिहास का स्वर्णिम पृष्ठ बन गयी है। आपने शिक्षा, साहित्य, शोध, सेवा, संगठन, संस्कृति, साधना सभी के साथ जीवन मूल्यों को तलाशा, उन्हें जीवनशैली से जोड़ा और इस प्रकार पगडंडी पर भटकते मनुष्य के लिए राजपथ प्रशस्त कर दिया। उनके पुरुषार्थी जीवन की एक पहचान थी गत्यात्मकता। वे अपने जीवन में कभी कहीं रुके नहीं, झुके नहीं। प्रतिकूलताओं के बीच भी आपने अपने लक्ष्य का चिराग सुरक्षित रखा। इसीलिए उनकी हर सांस अपने दायित्वों और कर्तव्यों पर चैकसी रखती रही है। खून पसीना बनकर बहती रही है। रातें जागती रही हैं। दिन संवरते रहे हैं। प्रयत्न पुरुषार्थ बनते रहे हैं और संकल्प साधना में ढलते रहे हैं। आज वह दिव्यात्मा ब्रह्मलीन हो गयी, लेकिन ऐसी महान् आत्माओं को कभी अलविदा नहीं कहा जा सकता। स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरिजी अब नहीं रहे मगर धर्म कहता है कि आत्मा कभी मरती नहीं। इसलिये इस शाश्वत सत्य का विश्वास लिये हम सदियों जी लेंगे कि गिरिजी अभी यहीं है, हमारे पास, हमारे साथ, हमारी हर सांस में, दिल की हर धड़कन में।

प्रेषक:

(ललित गर्ग)
ई-253, सरस्वती कंुज अपार्टमेंट
25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-92
फोन: 22727486, 9811051133